E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi, Assistant Professor, Department of Sanskrit, Dr. Shyama Prasad Mukherjee University, Ranchi

उपनिषद् का अर्थ और महत्त्व

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

उपनिषद् अध्यात्मविद्या अथवा ब्रह्मविद्या को कहते हैं। वेद का अन्तिम भाग होने से इसे वेदान्त भी कहा जाता है। उपनिषद् वेद का ज्ञानकाण्ड है। यह चिरप्रदीप्त वह ज्ञानदीपक है जो सृष्टि के आदि से प्रकाश देता चला आ रहा है और लयपर्यन्त पूर्ववत् प्रकाशित रहेगा। इसके प्रकाश में वह अमरत्व है, जिसने सनातनधर्म के मूल का सिञ्चन किया है। यह जगत्कल्याणकारी भारत की अपनी निधि है, जिसके सम्मुख विश्व का प्रत्येक स्वाभिमानी सभ्य राष्ट्र श्रद्धा से नतमस्तक रहा है और सदा रहेगा। अपौरुषेय वेद का अन्तिम अध्यायरूप यह उपनिषद्, ज्ञान का आदि स्रोत और विद्या का अक्षय्य भण्डार है।

दार्शनिक विद्वान् 'उपनिषद्' शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार बतलाते हैं-'उप+नि' इन दो उपसर्गों के साथ 'सद्' धातु से 'क्विप्' प्रत्यय करने पर 'उपनिषद्' इस रूप की सिद्धि होती है। 'सद्' धातु के तीन अर्थ लिये जाते हैं-(1) 'विशरण' अर्थात् नाश होना। (2) 'गति' अर्थात् प्राप्त होना। (3) 'अवसादन' अर्थात् शिथिल करना।

इन अर्थों के अनुसार-'उपनिषादयति सर्वानर्थकरसंसारं विनाशयति, संसारकारणभूतामविद्यां च शिथिलयति, ब्रह्म च गमयति इति उपनिषद्' अर्थात् जो समस्त अनर्थों को उत्पन्न करने वाले संसार का नाश करती, संसार की कारणभूत अविद्या को शिथिल करती तथा ब्रह्म की प्राप्ति कराती है, वह उपनिषद् है। वस्तुतः प्रत्यक्-चैतन्याभिन्न परब्रह्म को प्राप्त अथवा व्यक्त कराने वाली, निःसन्धिबन्धनात्मिका चिज्जडग्रन्थिस्वरूपा अविद्या को शिथिल करने वाली अविचारितरमणीय नामरूपक्रियात्मक मायामय विश्वप्रपञ्च को समूलोन्मूलन करके जीव की ब्रह्मात्मता को बोधित कराने वाली ब्रह्मविद्या ही उपनिषद् है।

इसके अतिरिक्त उप +नि + सद् का अर्थ बैठना भी होता है। इसका भाव यही हो सकता है कि गुरु के समीप शिष्य का शिक्षा ग्रहणार्थ बैठना। सम्भवतः प्राचीन काल में इसका यही अर्थ लिया जाता था अथवा ब्रह्म के समीप बैठना अर्थ लिया जाता रहा होगा, जिसका भाव यही हो सकता है कि ब्रह्म की प्राप्ति के जो साधन उपनिषदों में बतलाए गए हैं, उन साधनों के अनुसार अपने जीवन का निर्माण कर उस परमब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति के निमित्त लोग प्रयत्न करते थे तथा उसकी प्राप्ति भी करते थे।

'सद्' धातु के इन अर्थों में से यहाँ 'प्राप्त होना' अर्थ ही लिया जाना अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है-ऐसा कतिपय विद्वानों का अभिमत है। (उप) ब्रह्म की समीपता (नि) निश्चय करके जिससे (सद्) प्राप्त हो उसका नाम उपनिषद् है। अतः ब्रह्म प्राप्ति के साधनभूत ग्रन्थ का नाम भी उपनिषद् हुआ। इसकी व्युत्पत्ति इस प्रकार से की जा सकती है-'उप ब्रह्मसामीप्यं नि निश्चयेन सीदति प्राप्नोति यया सा उपनिषद्' अर्थात् जिसके द्वारा ब्रह्म की समीपता प्राप्त हो उसे 'उपनिषद्' कहते हैं।

सर्वव्यापक ब्रह्म की समीपता एक स्थान से दूसरे स्थान को प्राप्त कर लेने के सदृश नहीं प्राप्त हुआ करती है। इसकी प्राप्ति का साधन तो एकमात्र ब्रह्म ज्ञान ही है। अतः यहाँ इसका भाव इस प्रकार लेना चाहिए कि जिस ज्ञान अथवा विद्या के द्वारा उस परमात्मा का सामीप्य अर्थात् साक्षात्कार प्राप्त हो वह विद्या अथवा ज्ञान ही उपनिषद् है। परिणामस्वरूप इस ज्ञान को एक शब्द में 'ब्रह्मविद्या' अथवा 'ब्रह्मज्ञान' कहा गया है। इस विद्या अथवा ज्ञान के प्रतिपादक होने के कारण ग्रन्थ का नाम भी उपनिषद् पड़ा।

समस्त ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति आदि का कारण वह ब्रह्म ही है। जैसा कि वेदान्त दर्शन के 'जन्माद्यस्य यतः' में स्पष्ट किया गया है कि जिससे इस समस्त ब्रह्माण्ड का जन्म, स्थिति तथा प्रत्यय होता है उसी का नाम ब्रह्म है। यह ब्रह्म ही उपनिषदों में उपास्य देव स्वीकार किया गया है। अतः ब्रह्म विद्या अथवा ब्रह्मज्ञान अथवा आध्यात्मविद्या या आध्यात्म ज्ञान का वर्णन करना ही उपनिषदों का प्रधान विषय है। इन उपनिषदों का अध्ययन करने से मोक्ष प्राप्ति की इच्छा रखने वाले साधकजनों का अज्ञान नष्ट हो जाया करता है तथा उन्हें ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति हो जाती है। इस ज्ञान का सम्यक् अनुशीलन करने से आवागमन सम्बन्धी समस्त दुःखों का विनाश हो जाता है। दुःखों के इस

आत्यान्तिक विनाश का नाम मुक्ति अथवा मोक्ष है जिसका स्थान मानवजीवन के लक्ष्यीभूत चारों पुरुषार्थों में सर्वोपरि है।

शंकराचार्य ने भी कठोपनिषद् तथा तैत्तिरीयोपनिषद् की व्याख्या करते हुए 'उपनिषद्' शब्द का अर्थ ब्रह्मविद्या ही किया है। उपनिषदों में सर्वत्र ब्रह्म के स्वरूप तथा जीव और जगत् सम्बन्धी अनेक सुन्दर विषयों सुन्दर विवेचन उपलब्ध होता है। अतः इनकी उपनिषद् संज्ञा सार्थ ही है।

उपनिषद् शब्द का अर्थ 'रहस्यमय सिद्धान्त' भी माना गया है। कारण यह हैं कि उपनिषदों में 'इति रहस्यम्' तथा 'इति उपनिषदम्' शब्द अनेक स्थलों पर आते हैं जिनसे ज्ञात होता है कि रहस्य भी उपनिषद् का पर्यायवाची शब्द ही है। वस्तुतः ब्रह्म, जीव एवं जगत् आदि का वर्णन नितान्त रहस्यमय ही है। वस्तुतः ब्रह्म, जीव और जगत् आदि का वर्णन नितान्त रहस्यमय ही है। आधुनिक युग में भी जिस 'रहस्यवाद' की चर्चा साहित्यिक क्षेत्र में की जाती है वह रहस्यवाद भी आत्मा, परमात्मा एवं जगत् आदि के वर्णन से ही सम्बन्धित माना जाता है।

वैदिक साहित्य में उपनिषदों का स्थान सबसे अन्त में आता है। अतः 'वेदान्त' शब्द द्वारा भी इनका कथन किया गया है। यह वेदान्त ही ब्रह्म विद्या है। यह विद्या ही सर्वत्र समत्व का दर्शन कराती तथा अज्ञान की ग्रन्थियों को काटती है। इसी के द्वारा हमारे कर्म सुसंयत होते हैं तथा मन अन्तर्मुखी हुआ करता है। इसी के द्वारा सांसारिक मिथ्या ज्ञान की अनुभूति का विनाश एवं परमसत्य की उपलब्धि हुआ करती है। परम सत्य का स्वरूप एकमात्र ब्रह्म ही है। अतः ब्रह्म की प्राप्ति ही इस ब्रह्म विद्या का एकमात्र प्रतिपाद्य विषय है। इस ब्रह्म विद्या का प्रतिपादन वैदिक साहित्य के जिस सर्वोत्कृष्ट भाग में किया गया है उसी का नाम उपनिषद् है।

उपनिषदों की संख्या- यदि पूरे उपनिषद् साहित्य की गणना की जाय तो उपनिषदों की संख्या डेढ़ से दो सौ तक पहुँच जाती है। मुक्तिकोपनिषद् में उपनिषदों की संख्या 108 बतलायी गयी है। सुप्रसिद्ध उपनिषदों की संख्या दस है। ये प्राचीन एवं प्रामाणिक माने जाते हैं। इन्हीं दस उपनिषदों पर भगवान् शंकराचार्य ने भाष्य लिखा है।

उपनिषदों की रचनाशैली में विभिन्नता उपलब्ध होती है। कुछ उपनिषद् गद्यात्मक हैं, कुछ पद्यात्मक तथा कुछ पद्यात्मक तथा कुछ गद्य-पद्यात्मक उभयरूप हैं।

सभी उपनिषद् भारतीय अध्यात्मविद्या के देदीप्यमान रत्न हैं जिनकी प्रभा पर काल का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। जैसे-जैसे इनका सूक्ष्म अध्ययन किया जाता है वैसे ही वैसे नवीन-नवीन विषयों का ज्ञान पाठकों को सदैव उपलब्ध होता है। भारतीय ऋषियों ने अपने प्रतिभापूर्ण नेत्रों से जिन आध्यात्मिक तत्त्वों का साक्षात्कार किया था उन्हीं तत्त्वों से उपनिषद् भरे पड़े हैं।

उपनिषदों को एक ऐसा आध्यात्मिक मानसरोवर कहा जा सकता है कि जिससे ज्ञान की भिन्न-भिन्न सरिताएं निकलकर इस पुण्यभूमि में मानव मात्र के इहलौकिक तथा पारलौकिक कल्याण के लिए प्रवाहित होती हैं। इस ज्ञान की सरिता में जो व्यक्ति सच्ची भावना एवं मानसिक एकाग्रता के साथ स्नान कर लेता है वह उस आत्मज्ञान को प्राप्त कर लेता है।

वैदिकधर्म की मूलतत्त्वप्रतिपादिका 'प्रस्थानत्रयी' मानी गयी है जिसके अन्तर्गत उपनिषद्, गीता और ब्रह्मसूत्र आते हैं। इस प्रस्थानत्रयी में उपनिषद् को ही सर्वोपरि स्थान प्रदान किया जाता है क्योंकि गीता तथा ब्रह्मसूत्र की आधारशिला उपनिषद् ही है।